



Neutral Citation No. - 2026:AHC:181508

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

धारा 528 बीएनएसएस के अंतर्गत आवेदन संख्या - 32089 वर्ष 2026

विश्व नाथ यादव

.....आवेदक(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य

.....विपक्षी (गण)

आवेदक(गण) के अधिवक्ता : राजेंद्र जायसवाल, विशाल जायसवाल

विपक्षी (गण) के अधिवक्ता : शासकीय अधिवक्ता

न्यायालय संख्या - 79

माननीय न्यायमूर्ति सौरभ श्रीवास्तव

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



1. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता श्री राजेंद्र जायसवाल तथा राज्य की ओर से विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता को सुना।
2. वर्तमान आवेदन के माध्यम से, आवेदक ने दिनांक 01.02.2010 के समन/संज्ञान आदेश तथा वाद संख्या 3303029 वर्ष 2012 (राज्य बनाम योगेश दीक्षित एवं अन्य) की संपूर्ण कार्यवाही, जो वाद अपराध संख्या 378 वर्ष 2008, धारा 332, 353, 504 भा.दं.सं., थाना स्वरूप नगर, जिला कानपुर नगर से उत्पन्न हुई है और विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, कानपुर नगर के न्यायालय में लंबित है, को निरस्त किए जाने की प्रार्थना की है।
3. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि वे उक्त वाद की संपूर्ण कार्यवाही के साथ-साथ आक्षेपित समन आदेश को इस एकमात्र आधार पर चुनौती दे रहे हैं कि वर्तमान वाद लगभग 15 वर्षों से लंबित है, यद्यपि वर्तमान वाद की प्रथम सूचना रिपोर्ट वर्ष 2008 में दर्ज की गई थी और आरोप पत्र भी वर्ष 2008 में प्रस्तुत किया गया था तथा वर्ष 2010 में संज्ञान लिया गया था, किंतु आज तक इसका विचारण साक्ष्य प्रस्तुत किए जाने के चरण पर लंबित है। उक्त तथ्यों के आधार पर, आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि शीघ्र विचारण का अधिकार अभियुक्त के साथ-साथ परिवादी का भी भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अंतर्गत प्रत्याभूत मौलिक अधिकार है और लगभग 18 वर्षों से आवेदक बिना किसी दोष के आपराधिक विचारण की पीड़ा झेल रहा है तथा वर्तमान मामले की कार्यवाही लगभग दो दशकों से लंबित है। आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अनुसार, किसी भी व्यक्ति को विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



अनुसार के सिवाय उसके जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जाएगा और ऐसी प्रक्रिया युक्तिसंगत, निष्पक्ष तथा न्यायसंगत होनी चाहिए तथा विचारण पूरा करने में 18 वर्षों का अत्यधिक विलंब युक्तिसंगत, निष्पक्ष और न्यायसंगत नहीं कहा जा सकता। आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि अतः शीघ्र विचारण का अधिकार एक मौलिक अधिकार है, जिसका वर्तमान मामले में उल्लंघन हुआ है।

4. अपने प्रस्तुत किए गए तर्कों के समर्थन में, आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय, वकील प्रसाद सिंह बनाम बिहार राज्य [(2009) 3 एससीसी 355] तथा इस न्यायालय द्वारा महेंद्र सिंह एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य [2020 (9) एडीजे 15], महीपाल एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [2020 (9) एडीजे 16] और मदन मोहन सक्सेना बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य [(2023) 2 आईएलआर 1131] के मामलों में पारित निर्णयों पर भरोसा किया है।

5. उपरोक्त के अतिरिक्त, आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने न्यायालय को अवगत कराया कि आवेदक वर्ष 2020 में नगर पालिका में माली के पद से सेवानिवृत्त हुआ था और वर्तमान आपराधिक कार्यवाही के लंबित होने के कारण उसे सेवानिवृत्ति संबंधी देयकों का भुगतान नहीं किया गया है, जिसके कारण उसे वित्तीय संकट का भी सामना करना पड़ रहा है।

6. इसके विपरीत, राज्य की ओर से विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने वर्तमान आवेदन के माध्यम से की गई प्रार्थना का पुरजोर विरोध किया, किंतु इस तथ्य से इनकार नहीं किया कि आवेदक लगभग 18 वर्षों से आपराधिक विचारण की पीड़ा झेल रहा है, जिसके कारण उसे सेवानिवृत्ति संबंधी देयकों का भुगतान नहीं किया गया है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



7. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत परस्पर विरोधी तर्कों पर विचार करने तथा अभिलेख पर उपलब्ध संपूर्ण सामग्री के परिशीलन के पश्चात, न्यायालय ने पाया कि वर्तमान आवेदन इस एकमात्र आधार पर प्रस्तुत किया गया है कि आवेदक लगभग 18 वर्षों से, अर्थात् वर्ष 2008 से, आपराधिक विचारण की पीड़ा झेल रहा है और आज तक कार्यवाही समाप्त नहीं हो सकी है, जबकि आवेदक नियमित रूप से व्यक्तिगत रूप से अथवा अपने अधिवक्ता के माध्यम से न्यायालय में उपस्थित हो रहा है। अतः अभिलेख से यह परिलक्षित होता है कि विचारण में विलंब आवेदक के कारण नहीं हुआ है।

8. शीघ्र विचारण का अधिकार भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अंतर्गत प्रत्याभूत एक मौलिक अधिकार है। सर्वोच्च न्यायालय ने हुसैनआरा खातून एवं अन्य बनाम बिहार राज्य के गृह सचिव, एआईआर 1979 एससी 1360 के मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि शीघ्र विचारण जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार का अभिन्न अंग है और निम्नानुसार कहा है:-

"5. “ऐसी कोई प्रक्रिया, जो युक्तिसंगत रूप से शीघ्र विचारण सुनिश्चित नहीं करती हो, ‘युक्तिसंगत, निष्पक्ष या न्यायसंगत’ नहीं मानी जा सकती और वह अनुच्छेद 21 के प्रतिकूल होगी। अतः इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता कि शीघ्र विचारण, और शीघ्र विचारण से हमारा तात्पर्य युक्तिसंगत रूप से त्वरित विचारण से है, अनुच्छेद 21 में प्रत्याभूत जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार का अभिन्न और आवश्यक अंग है।”

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



9. हुसैनआरा खातून (उपर्युक्त) के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया कि शीघ्र विचारण के अधिकार का उल्लंघन भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अंतर्गत प्रत्याभूत मौलिक अधिकार का उल्लंघन है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 की वह व्याख्या, जैसा कि हुसैनआरा खातून (उपर्युक्त) के मामले में अभिलिखित की गई थी, सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा अब्दुल रहमान अंतुले बनाम आर.एस. नाइक (1992) 1 एससीसी 225 के मामले में विस्तृत रूप से विचारित की गई।

10. अब्दुल रहमान अंतुले (उपर्युक्त) के मामले में संविधान पीठ ने अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि प्रत्येक विलंब से आवश्यक रूप से अभियुक्त को प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है, किंतु अत्यधिक दीर्घ विलंब को प्रतिकूल प्रभाव का पूर्वानुमानित प्रमाण माना जा सकता है और अभियोजन को उत्पीड़न में परिवर्तित होने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए तथा यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि अभियुक्त के शीघ्र विचारण के अधिकार का उल्लंघन हुआ है, तो उसके विरुद्ध लंबित कार्यवाही निरस्त कर दी जानी चाहिए।

11. यह मुद्दा पुनः सर्वोच्च न्यायालय की सात न्यायाधीशों की संविधान पीठ के समक्ष पी. रामचंद्र राव बनाम कर्नाटक राज्य (2002) 4 एससीसी 578 के मामले में आया। सर्वोच्च न्यायालय की सात न्यायाधीशों की पीठ ने पी. रामचंद्र राव (उपर्युक्त) के मामले में अब्दुल रहमान अंतुले (उपर्युक्त) के मामले में संविधान पीठ द्वारा प्रतिपादित विधि को अनुमोदित किया और कहा कि अब्दुल रहमान अंतुले (उपर्युक्त) में निर्धारित दिशानिर्देश संपूर्ण नहीं हैं, बल्कि केवल निदर्शात्मक हैं और उनकी प्रयोज्यता प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगी। पी. रामचंद्र राव (उपर्युक्त) के मामले में सात न्यायाधीशों की संविधान पीठ ने अभिनिर्धारित किया कि उपर्युक्त मामलों में उचित राहत या उपर्युक्त निर्देश की मांग करते हुए दंड प्रक्रिया

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



संहिता की धारा 482 तथा भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के अंतर्गत उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार का आह्वान किया जा सकता है और निम्नानुसार कहा:-

"28. "यह उस मामले की सुनवाई करने वाले न्यायालय के विवेकपूर्ण विवेक पर छोड़ दिया जाना चाहिए कि वह किसी दिए गए मामले की समस्त परिस्थितियों से यह निर्धारित करे कि किसी निश्चित समय तक लगा समय अनुच्छेद 21 के उल्लंघन के समान है या नहीं, और यदि ऐसा है, तो संबंधित कार्यवाही को समाप्त कर दे तथा यदि ऐसा नहीं है, तो कार्यवाही को आगे बढ़ाए। परीक्षण यह है कि क्या कार्यवाही या विचारण इतनी लंबी अवधि तक लंबित रहा है कि अत्यधिक विलंब को, जैसा कि ए.आर. अंतुले में कहा गया है, युक्तिसंगत रूप से दमनकारी और अनुचित कहा जा सकता है।" कार्तार सिंह के मामले में संविधान पीठ ने इस सिद्धांत को मान्यता देते हुए कि अभियुक्त के शीघ्र विचारण के अधिकार से वंचित किए जाने के परिणामस्वरूप अभियोग को निरस्त करने अथवा दोषसिद्धि को उलटने का निर्णय लिया जा सकता है।

12. अतः हुसैनआरा खातून (उपर्युक्त), अब्दुल रहमान अंतुले (उपर्युक्त) और पी. रामचंद्र राव (उपर्युक्त) के मामलों में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत से यह स्पष्ट है कि शीघ्र विचारण का अधिकार एक मौलिक अधिकार है और इसके उल्लंघन से अभियुक्त व्यक्ति के प्रति भी प्रतिकूल प्रभाव उत्पन्न होता है।

13. आवेदक द्वारा भरोसा किए गए वकील प्रसाद सिंह बनाम बिहार राज्य (2009) 3 एससीसी 355 के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने हुसैनआरा खातून (उपर्युक्त), अब्दुल रहमान अंतुले (उपर्युक्त) और पी. रामचंद्र राव (उपर्युक्त) के मामलों में सर्वोच्च न्यायालय के पूर्ववर्ती निर्णयों सहित अन्य निर्णयों पर विचार करने के पश्चात अभिनिर्धारित किया कि यदि अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि अभियुक्त के शीघ्र विचारण के अधिकार का उल्लंघन हुआ है, तो मामले के अनुसार आरोप या दोषसिद्धि को निरस्त किया जा सकता है, जब तक कि न्यायालय यह न माने कि अपराध की प्रकृति और अन्य प्रासंगिक परिस्थितियों को देखते हुए कार्यवाही को निरस्त करना न्यायहित में नहीं होगा।

14. पंकज कुमार बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य (2008) 16 एससीसी 117 के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अभियोजन पक्ष ऐसा कोई असाधारण परिस्थितिजन्य तथ्य दर्शाने में विफल रहा, जिस पर विचारण को लंबा खींचे जाने को क्षम्य करने के लिए विचार किया जा सकता था और आठ वर्षों से अधिक के अत्यधिक विलंब के आधार पर अभियुक्त के विरुद्ध लंबित कार्यवाही को इस अभिनिर्धारण के पश्चात निरस्त कर दिया कि उसके शीघ्र विचारण के संवैधानिक अधिकार से उसे वंचित किया गया है।

15. वर्तमान मामले में, अभिलेख के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि विचारण पूरा करने में हुए अत्यधिक विलंब के लिए अभियुक्त/आवेदक को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता, क्योंकि आदेश पत्र से पता चलता है कि वह नियमित रूप से व्यक्तिगत रूप से अथवा अपने अधिवक्ता के माध्यम से न्यायालय में उपस्थित हो रहा है और वर्तमान मामले का विचारण धारा 332, 353, 504 भा.दं.सं. से संबंधित है, जिन्हें जघन्य अपराध नहीं कहा जा सकता तथा इसका विचारण लगभग 18 वर्षों से लंबित है और अभियोजन पक्ष ऐसे किसी असाधारण परिस्थिति को प्रस्तुत करने में विफल रहा है, जिससे इस प्रकार के अत्यधिक विलंब को क्षम्य ठहराया जा सके। अतः 18 वर्षों के अस्पष्टीकृत अत्यधिक विलंब को दमनकारी और अनुचित माना जाना चाहिए। अतः मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के अंतर्गत, इस न्यायालय की राय है कि आवेदक के शीघ्र विचारण के मौलिक अधिकार का उल्लंघन हुआ है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



16. उपर्युक्त तथ्यों और परिस्थितियों के दृष्टिगत, इस न्यायालय की राय है कि आवेदक के विरुद्ध लंबित आपराधिक कार्यवाही को आगे जारी रखना अनुचित है, अतः न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए, दिनांक 01.02.2010 का समन/संज्ञान आदेश तथा वाद संख्या 3303029 वर्ष 2012 (राज्य बनाम योगेश दीक्षित एवं अन्य) की संपूर्ण कार्यवाही, जो वाद अपराध संख्या 378 वर्ष 2008, धारा 332, 353, 504 भा.दं.सं., थाना स्वरूप नगर, जिला कानपुर नगर से उत्पन्न हुई है और विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, कानपुर नगर के न्यायालय में लंबित है, एतद्वारा निरस्त की जाती है।

17. तदनुसार, वर्तमान आवेदन अनुमन्य किया जाता है।

(न्यायमूर्ति सौरभ श्रीवास्तव)

31 अगस्त, 2026

विवेक कु.